© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Education

नक्सलवाद का फैलता दायरा : एकबारी से जहानाबाद तक

विशाल कुमार
शोधार्थी,
विश्वविद्यालय इतिहास विभाग,
बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बिहार)

गौरतलब है कि 1970 के दशक में नक्सलवादियों ने पुलिस के साथ कई जगहों पर जबर्दस्त संघर्ष किए। इसी समय यह भी साबित हुआ कि दमन के बल पर नक्सलवादियों को नहीं दबाया जा सकता क्योंकि इमर्जेन्सी के दौरान ही नक्सलवादियों ने सबसे ज्यादा सैनिक कार्रवाईयां की ओर सबसे ज्यादा वर्ग शत्रुओं का सफाया भी किया। लेकिन पुलिस के साथ संघर्ष में नक्सलवादियों की सैनिक शक्ति का भी काफी नुकसान हुआ। सन् 1975 के अंत में लिबरेशन गुट के पास सिर्फ एक हथियारबंद दस्ता बच गया था–भोजपुर के सहार ब्लाक में और वह भी घुमंतू बन चुका था जिसे पार्टी के लिए संभालना मुश्किल हो गया था। अंत में पार्टी ने दस्ते के सदस्यों को व्यक्तिगत रूप से संगठनकर्त्ता के रूप में बिखेर दिया।

यही हाल पटना का था। लिब्रेशन ग्रुप के अधिकांश नेता और फौजी या तो मारे जा चुके थे या गिरफ्तार हो चुके थे। इन प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद 28 जुलाई, 1974 को अस्तित्व में आया लिबरेशन गुट जल्दी ही अन्य जिलों के ग्रामीण अंचलों में दस्तक देने लगा। पटना के पुनपुन, नौबतपुर, मसौढ़ी, बिक्रम, पाली, नालंदा के हिलसा, एकंगरसराय, गया–जहानाबाद के काको, कुर्था, मखदुमपुर, घोसी, अरवल और औरंगाबाद के ओबरा, दाउदनगर, हसनपुर आदि के गरीब किसान और भूमिहीन दलित खेतिहर मजदूर आंदोलन के केन्द्र बन कर उभरने लगा।

पटना जिले में नक्सलियों ने 'वर्ग शत्रु' का पहला सफाया 1972 में किया। मसौढ़ी ब्लॉक में लहसुना गांव के किशोरी सिंह को नक्सली समर्थकों की भीड़ ने मार डाला। किशोरी सिंह यूं तो कोई बड़े भूस्वामी नहीं थे लेकिन वे क्रूर और सामंती मिजाज के लिए कुख्यात थे। घटना की पृष्ठभूमि यों है। उन्होंने अपने गांव के सुखु साव की पत्नी फेंकनी देवी के साथ बलात्कार किया था। गांव वालों ने जब इसके बारे में उनसे जवाब तलब किया तो वे जवाब देने के बदले ऐंठ दिखाने लगे। स्थिति तनावपूर्ण बनते देख किसी ने पुलिस को खबर कर दी। पुलिस ने पीड़िता को राहत दिलाने के बदले किशोरी सिंह का साथ दिया और सुखु साव और उनकी पत्नी को पकड़ लिया। वैसे पुलिस ने किशोरी सिंह को भी साथ ले लिया था। लेकिन तबतक काफी संख्या में आसपास के गांवों से लोग वहां पहुंच चुके थे। पुलिस का रवैया देखकर लोगों में गुस्सा भड़क उठा और वे दारोगा सहित पुलिस वालों पर टूट पड़े। लोगों ने सुखु साव और फेंकनी

देवी को पुलिस से छुड़ा लिया और किशोरी सिंह को मार डाला। कहने का अर्थ कि नक्सलवादियों ने सदियों से दबे–कुचले लोगों को अन्याय का विरोध करना सिखा दिया। भीड़ ने दारोगा और बीडीओ को भी जमकर पीटा इसके बाद उसी गांव के एक भूस्वामी को मार डाला गया। इन सफायों से भूमिहीन गरीब किसानों का एक हिस्सा नक्सली संगठनों के झंडे तले संगठित होने लगा। दलितों, भूमिहीनों को इन सफायों में पहली बार नीचता की आरोपित संस्कृति से मुक्ति की एक किरण दिखाई पड़ी। अन्यथा क्या कारण है कि पुलिस और भूस्वामियों के डंडे भी उन्हें नक्सलियों के साथ जाने से नहीं रोक पाए।

उल्लेखनीय है कि 1970 के दशक के आरंभ में कम्युनिस्ट और समाजवादी लोग पटना जिला के पुनपुन नदी के किनारे वाले क्षेत्र में न्यूनतम मजदूरी के लिए संगठित करते रहे थे। उनकी गतिविधियां अधिकांशतः न्यूनतम मजदूरी के भुगतान के लिए श्रम विभाग में मुकदमा दायर करने तक सीमित रहती थी। इस विवाद में मजदूरों पर कर्ज का बोझ बढ़ ही जाता था। इस मोड़ पर क्रांतिकारी राजनीतिक संगठनों का मंच पर पर्दापण हुआ। उनके द्वारा उठाए गए मुद्दे होते थे, न्यूनतम मजदूरी कानून का क्रियान्वयन, बलात्कार और छूआछूत जैसे सामाजिक उत्पीड़न का अंत, गैर मजरूआ जमीन पर कब्जा आदि।

भोजपुर के नागेन्द्र यादव पुनपुन के मजदूरों को सीपीआई (एम.एल) के बैनर में 1971 से संगठित कर रहे थे। कालांतर में नेमा गांव के डिहरी मुसहरी के बिरदा मांझी के नेतृत्व में ऐसा एक दस्ता का निर्माण हुआ। बिरदा मुसहर नेमा गांव के भूमिहार भूपति बच्चु सिंह का बंधुआ मजदूर (हलवाहा) हुआ करता था। बच्चू सिंह सीपीआई के पदाधिकारी भी थे। कहा जाता है कि एक बार वे और बिरदा सीपीआई की जनसभा में शामिल हुए। वहां वक्ता ने न्यूनतम मजदूरी लागू करने की पार्टी की मांग दुहराया। रात में अपने मालिक की मालिश करते समय लगता है कि बिरदा ने न्यूनतम मजदूरी का मुद्दा छेड़ दिया। इसी पर मालिक ने नौकर को लात मार दिया। इसके बाद से बिरदा प्रतिबद्ध योद्धा बन गया और उसने कृषि आंदोलन को स्थानीय स्तर पर नेतृत्व दिया।

पुनपुन के नेमा गांव के भूमिहार भूस्वामियों और मजदूरों के बीच 1972 के विधान सभा चुनाव से ही दुश्मनी पनप रही थी। इस चुनाव में तीखें मतभेद खुलकर सामने आ गए। इसके बाद मजदूरों ने भूमिहार भूस्वामियों के काम का बहिष्कार किया।

मार्च 1973 में दो मजदूरों की मुंडविहीन लाशें पुनपुन नदी के रेत पर मिलीं। तब आतंकित मजदूर बिरदा मुसहर के इर्द–गिर्द जमा हुए। इस बढ़ती दुश्मनी का सरकारी जवाब यह था कि नेमा गांव में पुलिस कैंप बैठा दिया गया। 1975 में रेकुली गांव में किया गया। इसमें पांच भूस्वामी मार डाले गए। दस्ता के सदस्यों ने जमींदार के उत्पीड़न और पुलिस की ज्यादती का जवाब लाल आतंक से देना चाहते थे।

महत्वपूर्ण बात यह थी कि वर्ग दुश्मन का सफाया अभियान का नेतृत्व एक दलित (बिरदा मुसहर), एक कुर्सी (लाल बाबू सिंह) और एक यादव (नागेन्द्र यादव) ने किया था। लाल बाबू सिंह पार्थु गांव के मुखिया रह चुके थे। मारे गए जमींदार भी पिछड़ी जातियों के थे।

क्रांतिकारी आंदोलन में विविध जातियों से आए सदस्यों का प्रवेश व्यापक वर्गीय एकजुटता और वर्गीय समन्वय कायम करने के माध्यम से होता है। यह काम उस समाज की पृष्ठभूमि में हो रहा था तो पवित्रता और अपवित्रता, शुद्ध और अशुद्ध के आचरण को ईश्वरीय विधान मानता था। अंतरजातीय आदान–प्रदान

के विविध प्रतिबंध खत्म नहीं हुए थे, लेकिन आर्थिक हित और युगों पुराना सामंती सामाजिक और लैंगिक उत्पीड़न के खात्मे के मामले में नई वर्गीय पांतबंदी हो रही थी।

निष्कर्ष

ऊपर की चर्चाओं से यह स्पष्ट है कि नक्सली आंदोलन की प्रेरणा भले ही चीन से मिली हो, लेकिन बिहार की सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों ने इस आंदोलन के विकास के लिए उर्वर भूमि तैयार की। आजादी के बाद ग्रमीण क्षेत्रों में विकास के लिए अनेक कार्यक्रम शुरू किए गए, लेकिन बिहार में सत्ता के सामंती चरित्र, जटिल नियम–कानून, भ्रष्टाचार, प्रशासनिक उपेक्षाओं, जागरूकता की कमी जैसे कारणों से विकास का लाभ कुछेक वर्गों और मुट्ठीभर लोगों तक सीमित रहा। आंदोलन का प्रारंभिक नेतृत्व भी जमींदारों और उनके लठैतों से हथियार छीन लेने में विश्वास रखता था। बिरदा मुसहर ने यह घोषणा की कि जमींदारों के पास जो कुछ है, वह मेहनतकश वर्ग के कठिन श्रम का प्रतिफल है। उन्होंने गरीबों से जमीन, भोजन और अन्य संसाधन हड़प लिए हैं। साथ ही उन्होंने खुद को हथियारों से लैस कर लिया है। इसलिए यह न्यायोचित है सब कुछ उससे छीन लिया जाए। विरदा मुसहर और नागेन्द्र यादव सहित दस्ता के सोलह सदस्य 1975 में पुलिस मुठभेड़ में मार डाले गए।

संदर्भ सूची :

1. अजय कुमार सिंह, नक्सलिज्म इन बिहार, पूर्वोक्त, पृष्ठ 76–77.
2. एस. पाण्डेय, नक्सल वायलेंस : ए सोशियोपॉलिटिकल स्टडी, चाणक्य, दिल्ली, 1985, पृ. 23–29.
3. कुमार नरेन्द्र सिंह, बिहार में निजी सेनाओं का उद्भव और विकास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005.
3. पूर्वोक्त.
4. अजय कुमार सिंह, पूर्वोक्त, पृष्ठ 82.
5. प्रकाश लुईस, पूर्वोक्त, पृ. 169.
6. ए.के. दुबे, क्रांति का आत्म संघर्ष, विनय प्रकाशन, दिल्ली, 1991, पृ. 246.